# शुष्क क्षेत्र में
# बेर की खेती से अधिक आमदनी

डॉ ओम प्रकाश पारीक
डॉ बृज भूषण वशिष्ठ

डॉ रमा शंकर सिंह
डॉ विशाल नाथ

भाकृअनुप
ICAR

केन्द्रीय शुष्क उद्यानिकी संस्थान,
बीकानेर 334006 (राजस्थान)

प्रसार प्रकाशन – 1
द्वितीय संस्करण – 2002

प्रकाशक :
निदेशक
केन्द्रीय शुष्क उद्यानिकी संस्थान,
श्रीगंगानगर रोड, बीछवाल
बीकानेर – 334 006 (राजस्थान)
दूरभाष : 250147, 250960
फैक्स : 0151–250145

कम्प्यूटरीकरण :
महावीर कुमार जैन
भोजराज खत्री

हिन्दी रूपान्तरण :
प्रेमप्रकाश पारीक

छायांकनः
संजय पाटिल

आवरण चित्र
अग्र भाग – बेर किस्म 'सेव' से लदी हुई शाखायें
पार्श्व भाग – शुष्क क्षेत्र में बेर का बाग

मुद्रक : मनीष प्रिन्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
व्यापारियों का मौहल्ला, बीकानेर फोन 522957

# शुष्क क्षेत्र में बेर की खेती से अधिक आमदनी

भारत वर्ष में पाये जाने वाले फलों में बेर एक प्राचीनतम फल है जिसका वर्णन अनेक ग्रन्थों एवं साहित्यों में मिलता है। 'शबरी के बेर' का वर्णन तो रामायण में सर्व विदित है ही अपितु वेद, पुराण व अन्य धार्मिक ग्रन्थों में भी इसकी व्याख्या की गयी है। भारतीय बेर जिसका वानस्पतिक नाम जिजिफस मोरीसियाना है, 'रैहमनेसी' कुल का सदस्य है। बेर के पौधे अपने आपको विपरीत परिस्थितियों में ढालने की अद्‌भुत क्षमता रखते हैं जिसके फलस्वरूप ये शुष्क एवं अर्ध शुष्क क्षेत्र जहां वार्षिक वर्षा बहुत कम एवं अनियमित तथा सूर्य विकिरण अधिक होता है, में सफलता पूर्वक फलोत्पादन करते हैं।

बेर का फल पौष्टिक तत्वों से परिपूर्ण है जिसमें विटामिन, खनिज लवण, शर्करा इत्यादि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इसके फल पौष्टिक गुणों में हिमालय के सेव से कहीं कम नहीं है। ऐसा पाया गया है कि प्रति 100 ग्राम बेर के फल में 0.8–0.9 ग्रा. स्टार्च, 4.9–12.4 ग्रा. शर्करा, 03–0.5 ग्रा. राख, 0.03–0.04 ग्रा. कैल्सियम, 0.01–0.02 ग्रा. फॉस्फोरस, 0.5–1.0 मि.ग्रा. लौह तत्व और 66–133 मि. ग्रा. विटामिन–सी प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त बेर के फलों में 16–18$^0$ ब्रिक्स कुल घुलनशील ठोस एवं 0.1–0.5 प्रतिशत अम्लता भी पायी जाती है। बेर के फलों को ताजा एवं परिरक्षित पदार्थ के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसके फलों से शर्बत, जैम, मुरब्बा, कैण्डी, सूखे बेर, इत्यादि परिरक्षित पदार्थ बनाये जा सकते हैं। शुष्क क्षेत्र में बहुतायत से पाये जाने वाले देशी बेर जिसे 'बोरड़ी' के नाम से जाना जाता है, के खट्‌टे–मीठे फलों को सुखाकर प्रयोग करने की परम्परा अत्यन्त प्राचीन एवं लाभदायक है। पोषक फल देने के अलावा बेर के विभिन्न भाग औषधीय उपयोग के लिए प्रयुक्त होते है। फल सेवन करने से रक्त साफ होता है और पाचन क्रिया

ठीक रहती है। कच्चे फल के सेवन से कफ़ बढ़ता है जबकि पका हुआ फल शीतल, पचनीय और शक्तिवर्धक आहार माना गया है। अतिसार में इसकी छाल को दवा के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। आयुर्वेद व यूनानी चिकित्सा प्रणाली में बेर के फल, पत्तियां, छाल, आदि का प्रयोग विभिन्न रोगों के उपचार में किया जाता है। बेर की पत्तियां (पाला) भेड़, बकरी, ऊंट इत्यादि के लिये एक उत्तम, पौष्टिक चारा है विशेषकर बकरी इसे बड़े चाव से खाती है इसलिए पुराणों में 'अजाप्रिया' नाम से भी वर्णन मिलता है। इसकी पत्तियों में 5.6 प्रतिशत पाच्य प्रोटीन और 49.7 प्रतिशत कुल पाच्य पोषक तत्व पाया जाता है। बेर की सूखी टहनियों का प्रयोग बाड़ लगाने एवं जलाने के लिए किया जाता है। बोरड़ी के काष्ठीय तनों का प्रयोग खेती के काम आने वाले छोटे–मोटे औजार एवं घरेलु उपयोग की वस्तुएँ बनाने के लिए किया जाता है।

हमारे देश के लगभग सभी राज्यों में बेर की बागवानी की जाती है परन्तु मुख्य रूप से हरियाणा, राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, इत्यादि राज्यों के लगभग 70,000 हैक्टेयर क्षेत्रफल में इसकी कास्त होती है। राजस्थान में चौमू, जयपुर, जोधपुर एवं भरतपुर, हरियाणा में हिसार, रोहतक, जींद, पानीपत, महेन्द्रगढ़, नारनौल एवं गुड़गांव; गुजरात में बनासकांठा एवं साबरमती, इत्यादि कुछ ऐसे महत्वपूर्ण स्थान हैं जहां पर बेर की व्यवसायिक खेती प्रमुख रूप से की जाती है।

## भूमि एवं जलवायु

बेर की कास्त साधारणतः सभी प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है। इसे उथली से लेकर गहरी कंकरीली–पथरीली, बलुई, काली, लाल और चिकनी मिट्टी में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। बेर एक सहिष्णु पौधा है अतः इसे क्षारीय अथवा लवणीय व परती अथवा बंजर भूमि में भूमि सुधारक का प्रयोग करके सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। पूर्णरूप से स्थापित पौधे, मृदा की उच्च लवणता (21 इ.एस.पी.) को भी सहन करने में सक्षम होते हैं।

बेर शुष्क एवं अर्धशुष्क जलवायु की अलग–अलग दशाओं में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। इसकी खेती समुद्रतल से 1000 मीटर की ऊंचाई तक स्थित पहाड़ी व मैदानी क्षेत्रों में की जा सकती है। बेर के पौधों में अत्यधिक गर्मी को सहन

करने की क्षमता होती है परन्तु पाला पड़ने से नये प्ररोहों, पत्तियों व फलों को हानि पहुंचती है। कभी–कभी जब वायुमण्डल का तापमान शून्य डिग्री सेल्सियस से कम हो जाता है तो नये पौधे मर जाते हैं। जलवायु भिन्नता के कारण उत्तरी भारत में ग्रीष्म ऋतु (मई–जून) में बेर के पत्ते झड़ जाते हैं और पौधे सुषुप्तावस्था में चले जाते हैं जबकि दक्षिण भारत में सम जलवायु होने के कारण पूरे वर्षभर पौध वृद्धि होती रहती है।

## उन्नत किस्में

देश के विभिन्न भागों में बेर की अनेक प्रजातियां पायी जाती हैं जिनमें झरबेर, बोरड़ी, कलमी बेर आदि प्रमुख हैं। झरबेर के झाड़ीनुमा पौधे राजस्थान के थार मरूस्थल तथा मध्य एवं दक्षिण भारत के पठारी क्षेत्रों में जंगली रूप में पाये जाते हैं। इनके फल छोटे होते हैं जिनमें गूदे की मात्रा कम तथा गुठली का आकार बड़ा होता है। राजस्थान, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली व मध्य प्रदेश के औसत जलवायु वाले क्षेत्रों में बोरड़ी के पौधे पाये जाते हैं जिनके फलों का आकर अपेक्षाकृत बड़ा तथा गूदे की मात्रा अधिक होती है। इसके फलों में शर्करा एवं खटास का विशेष समन्वय होता है जिससे इस फल की महत्ता को बढ़ावा मिलता है। कलमी बेर के फल बड़े, अधिक गूदा वाले एवं स्वादिष्ट होते हैं जिसकी खेती एक प्रमुख उद्यानिकी फसल के रूप में शुष्क एवं अर्ध शुष्क क्षेत्रों में की जाती है।

अच्छी गुणवत्ता के फल उत्पादन के लिये क्षेत्र के अनुसार सही व उन्नत किस्मों का चयन करना जरूरी है। वर्तमान में बेर की लगभग 300 किस्में हैं जिनमें से कुछ किस्में व्यवसायिक दृष्टि से खेती के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। सूखे क्षेत्रों के लिये गोला, सेब व मुंडिया किस्में बहुत ही उपयुक्त हैं। जबकि उपोष्ण जलवायु के लिये सनौर–2, मेहरून और उमरान किस्में अच्छी पायी गयी हैं। उत्तरी भारत में गोला सबसे शीघ्र पक कर तैयार होने वाली एक अच्छी किस्म है जबकि कैथली व मुंडिया किस्में मध्य समय में पक कर तैयार होती है। किस्मों में 'उमरान' सबसे लोकप्रिय है। शुष्क क्षेत्र में सिंचाई की समुचित सुविधा उपलब्ध होने की दशा में देर से पक कर तैयार होने वाली उमरान किस्म को लगाकर अधिक फल उत्पादन लिया जा सकता है। बेर की व्यवसायिक किस्मों का विवरण निम्नलिखित तालिका में दिया गया है।

## बेर की व्यवसायिक किस्में

| राज्य | बेर की किस्में | | |
|---|---|---|---|
| | अगेती | मध्यम | पछेती |
| राजस्थान | गोला | सेव, मुंडिया, जोगिया | काठा, उमरान, इलायची |
| हरियाणा | गोला, सफेदा, चौंचल, संदूरा नारनौल | कैथली, सनौर–5 | उमरान |
| पंजाब | गोला, नाजुक, नोकी | बनारसी, कैथली, दनदन | उमरान, जेड.जी.–3 |
| महाराष्ट्र | बादामी | मेहरून | |
| गुजरात | गोमा कीर्ति | मेहरून | चमेली |
| उत्तर प्रदेश | बनारसी गोला, नरमा वाराणसी | बनारसी कड़ाका, पेबंदी | जोगिया, अलीगंज, उमरान |

केन्द्रीय उद्यानिकी परीक्षण केन्द्र, गोधरा (गुजरात) में उमरान किस्म से चयनित एक नयी अगेती किस्म 'गोमा कीर्ति' विकसित की गई है। लवणीय मृदा या सिंचाई के लिये लवणयुक्त पानी उपलब्ध होने वाले क्षेत्रों के लिये गोला सबसे उपयुक्त किस्म है।

**कुछ महत्वपूर्ण व्यवसायिक किस्मों के गुणों का विवरण इस प्रकार से है :**

**गोला** – इस किस्म के पौधे फैलने वाले स्वभाव के तथा शाखाएं झुकी हुई प्रकृति की होती है। गोला एक अगेती किस्म है जिसके फल जनवरी के मध्य तक पक कर तैयार हो जाते हैं। वर्षा पर आधारित तथा लवणीय मिट्टी व पानी वाले क्षेत्रों के लिये यह एक उपयुक्त किस्म है। इसके फल आकार में गोल, गूदेदार, रसीले तथा 20–25 ग्राम वजन के होते हैं। फलों में कुल घुलनशील ठोस 20 प्रतिशत एवं गूदा तथा गुठली का अनुपात 14 होता है। वर्षा पर आधारित क्षेत्रों में गोला बेर के एक पौधे से 40–60 कि.ग्रा. तथा सिंचित क्षेत्रों में 100–150 कि.ग्रा. तक फल उपज प्राप्त होती है।

**सेव** – इस किस्म के घनी पत्तीदार पौधे फैलाव के साथ सीधे बढ़ते हैं। सेव किस्म में फल फरवरी के मध्य से मार्च के प्रथम सप्ताह तक पक कर तैयार होते हैं। फलों का आकार सेव के समान तथा औसत वजन 25–40 ग्राम प्रतिफल होता है। कच्चे फलों का रंग हरा होता है जो पकने के बाद लाल धारियों युक्त हल्के हरे पीले रंग के हो जाते हैं। इस किस्म के फलों का छिलका खुरदरा एवं मोटा तथा गूदा अपेक्षाकृत कठोर होता है। अतः इसे छिलका उतार कर भी खाया जा सकता है। सेव में कुल घुलनशील ठोस की मात्रा 19.5 प्रतिशत तथा गूदा और गुठली का अनुपात 14.4 है। यह एक अधिक उपज देने वाली किस्म है जिससे सिंचित अवस्था में 100–200 कि.ग्रा./वृक्ष तक फल उपज मिल जाती है परन्तु वर्षा आधारित क्षेत्रों से 40–50 कि.ग्रा. फल/वृक्ष ही प्राप्त होता है।

**कैथली** – कैथली किस्म के बहुशाखित पौधे अपेक्षाकृत अधिक फैलाव के साथ सीधे बढ़ते हैं। मध्य मौसम में पकने वाली यह किस्म हरियाणा, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, इत्यादि राज्यों के लिए सबसे उपयुक्त मानी जाती है। इसके पूर्ण विकसित फल पीले हरे रंग के चिकनी सतह वाले होते हैं जिनका औसत वजन 28–35 ग्राम होता हैं। फलों का गूदा मुलायम, रसदार एवं छिलका पतला होता है। फलों में 17.6 प्रतिशत मिठास, 0.5 प्रतिशत अम्लता व 98.3 मिग्रा/100ग्रा. विटामिन सी की मात्रा पायी जाती है। सिंचित क्षेत्र में उगाई जाने वाली यह एक अधिक उपज देने वाली किस्म है परन्तु वर्षा पर आधारित बागों से औसतन 50–60 कि.ग्रा. फल प्रति वृक्ष ही प्राप्त हो पाता है जबकि सिंचित बगीचों से 2–2.5 क्विंटल फल प्रति वृक्ष तक पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

**मुंडिया** – यह अगेती–मध्य मौसम में पकने वाली किस्म है जिसके पौधे अर्ध फैलाव लिए हुए लगभग सीधे बढ़ने वाले होते हैं। मुंडिया किस्म के पौधों का ढांचा अपेक्षाकृत छोटा होता है। इस किस्म के फल घंटी के आकार के होते हैं जिनका औसत वजन 35–40 ग्राम होता है। फलों का गूदा मुलायम व मीठा तथा गुठली का आकार छोटा होता है। फलों में 20 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस पाया जाता है जबकि गूदा गुठली का अनुपात 23 है। एक पूर्ण विकसित पेड़ से औसतन 100–120 कि.ग्रा. फल उपज मिलती है।

**बनारसी कड़ाका** – इस किस्म के पौधे विरल पत्तीदार एवं सीधे बढ़ने वाले होते हैं। लम्बे आकार के पीले रंग वाले इसके फल फरवरी के अन्त तक पक कर तैयार होते हैं। फलों का गूदा मुलायम एवं मीठा तथा गुठली बहुत पतली होती है। फलों का औसत वजन 30–40 ग्राम होता है। यह उत्तर प्रदेश, बिहार, दिल्ली,

हरियाणा एवं मध्य प्रदेश राज्यों की एक प्रमुख किस्म है जिससे 100–120 किग्रा. फल प्रति वृक्ष प्राप्त होता है।

**उमरान** – उमरान अधिक उपज देने वाली पछेती किस्म है जिसके पौधे ऊपर की तरफ बढ़ने वाले तथा पत्तियां विरल होती हैं। इसकी खेती देश के अधिकांश सिंचित क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है। फल का आकार बड़ा होता है जिसमें औसतन 30–35 ग्राम वजन होता है। इस किस्म के फलों का गूदा कड़ा व मिठास युक्त होता है जिसमें 19 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस, 0.2 प्रतिशत अम्लता तथा 100 मिग्रा/100 ग्रा. विटामिन 'सी' की मात्रा पायी जाती है। पौधों की समुचित देखभाल करने के उपरान्त एक स्वस्थ पौधे से औसतन 1.5–2.0 क्विन्टल पैदावार मिल जाती है। इसके फल परिरक्षण के लिये उत्तम पाये गये हैं। यह किस्म चूर्णिल आसित (पाउड्री मिल्ड्यू) के प्रति अधिक सहिष्णु होती है। केन्द्रीय शुष्क उद्यानिकी संस्थान, बीकानेर के गोधरा स्थित अनुसंधान केन्द्र द्वारा उमरान की एक जल्दी पकने व अधिक उपज देने वाली किस्म (प्रतिकार) (क्लोन) का चयन किया गया है जिसे 'गोमा कीर्ति' के नाम से जाना जाता है।

## पौध तैयार करने की विधियां

बेर के पौधे बीज तथा कायिक विधियों द्वारा तैयार किये जा सकते हैं। बीज द्वारा तैयार पौधे प्रायः मूलवृन्त के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। बाग लगाने के लिए कायिक विधि से तैयार पौधों का प्रयोग किया जाता है। कायिक विधि से बेर के पौधे मुख्यतया कलिकायन (पैच, टी व आई बडिंग) से तैयार किये जाते हैं। झरबेरी और बोरड़ी के मूलवृंतों पर उन्नत किस्मों के पैबन्द चढ़ाकर (बडिंग) पौधे तैयार किये जा सकते हैं। मूलवृंत तैयार करने के लिए मार्च–अप्रैल में बोरड़ी के बीज की बुआई करते हैं। साबुत गुठली बोने से अंकुरण लगभग एक महीने बाद होता है अतः गुठली को तोड़कर उसमें से गिरी (बीज) निकाल करके उसकी बुआई पॉलीथीन की नलियों (ट्यूब्स) में करते हैं। पॉलीथीन की 25 से.मी. (10 इंच) लम्बी; 10 से.मी. (4 इंच) व्यास व 300 गेज मोटाई की ट्यूब्स को सड़ी हुई खाद, चिकनी मिट्टी तथा बालू रेत के बराबर अनुपात (1 : 1 : 1) के मिश्रण से भरते हैं क्योंकि पॉलीथीन की नलियों के दोनों सिरे खुले होते हैं अतः भरी हुई नलियों को पौधशाला की क्यारी में सीधा जमाकर रखने पर नलियों से मिश्रण बाहर नहीं निकलता है। उत्तर भारत में बीज की बुआई के लिये अप्रैल का समय उपयुक्त होता है तथा जुलाई में मूलवृंत कलिकायन (बडिंग) योग्य तैयार हो जाता है। बीज की बुआई 2 सेमी. की गहराई

पर करते हैं तथा प्रतिदिन फुहारे से हल्की सिंचाई करने पर एक सप्ताह के अन्दर अच्छा अंकुरण हो जाता है। बीज अंकुरण के पश्चात् तीन–चार दिन के अन्तराल पर सिंचाई करने पर पौध वृद्धि अच्छी होती है। इस तरह लगभग तीन महीने (90 दिन) बाद पौधे (मूलवृंत) कलिकायन (पैबंद चढ़ाने) के लिये तैयार हो जाते हैं। पैबंद चढ़ाने लिए सबसे उपयुक्त समय जुलाई होता है परन्तु देश के विभिन्न क्षेत्रों में जलवायु के आधार पर जून से सितम्बर माह तक बडिंग किया जा सकता है। बडिंग के 30–45 दिनों के पश्चात् पौधे बगीचे में रोपने योग्य तैयार हो जाते हैं। स्वस्थानिक (इन सीटू) विधि में मूलवृंत सीधे बाग में रेखांकन के अनुसार लगाये जाते हैं जिन पर अगले वर्ष पैबंद चढ़ाते हैं।

## पौध रोपण

शुष्क क्षेत्र में पौध लगाने का सबसे उपयुक्त समय वर्षा ऋतु (जुलाई–अगस्त) है। सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो बसंत ऋतु (फरवरी–मार्च) में भी पौध रोपण किया जा सकता है। चूंकि शुष्क क्षेत्र में सिंचाई के लिये पानी सीमित है अतः वर्षा के जल का समुचित उपयोग करके बारानी क्षेत्रों में बेर की पौध–स्थापना सुनिश्चित की जा सकती है। रेखांकन करने के बाद 6 x6 मीटर की दूरी पर 60 x60 x60 सेमी. आकार के गड्ढे वर्षा ऋतु के पूर्व तैयार कर लेते है। रोपाई के एक माह पहले इन गड्ढों में 2 टोकरी सड़ी हुई गोबर की खाद व 50 ग्राम मिथाइल पैराथियान (5%) चूर्ण को मिट्टी में मिलाकर अच्छी तरह भर देते हैं। तत्पश्चात् उनमें सिंचाई की जाती है ताकि मिट्टी अच्छी तरह से बैठ जाय। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में पौध रोपण के लिये 6 मीटर की दूरी उपयुक्त पायी गयी है जबकि सिंचित क्षेत्रों या 500 मिमी. से अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में पौधों की दूरी 8 x8 मीटर होनी चाहिए। बलुई मिट्टी में गड्ढे तैयार करते समय बेन्टोनाइट या चिकनी मिट्टी की परत बिछाने से पानी अत्यधिक नीचे नहीं जाता है और पौधों को उचित नमी उपलब्ध होती रहती है जो सफल पौध स्थापन्न में सहायक होती है। इसी प्रकार, कम वर्षा वाले क्षेत्रों में, पौध रोपण के पश्चात उसके आस पास ढलान (5 प्रतिशत) बनाकर वर्षा जल को एकत्र किया जा सकता है जिससे पौधों की स्थापना में मदद मिलती है। अच्छी तरह से जमे हुए गड्ढों में पौध लगाने से उनकी स्थापना ठीक होती है। रोपण के पश्चात् हल्की सिंचाई अत्यंत आवश्यक होती है। पौधा पूर्णरूप से स्थापित होने तक समय–समय पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

## सिंचाई व जल प्रबंध

बेर के नये पौधे स्थापित करने के लिये प्रथम वर्ष में सिंचाई की अधिक आवश्यकता पड़ती है। एक बार जब पौधे अच्छी तरह से जम जायें तब असिंचित दशा में भी बेर के पौधों से अच्छी उपज मिल जाती है। सूखा पड़ने की स्थिति में भी अन्य फलदार फसलों की तुलना में बेर से अच्छा उत्पादन मिलता है। बेर में अच्छी गुणवत्ता के अधिक फल उत्पादन के लिये फूल आने से पहले व फल बनने की अवस्था पर 15–20 दिन के अंतराल पर दो तीन बार सिंचाई करना लाभप्रद होता है। मार्च–अप्रैल में पौधों को पानी देना हानिकारक होता है क्योंकि इससे फलों की परिपक्वता में देरी तथा उनके फटने व रोग लगने की समस्या बढ़ जाती है।

कम वर्षा वाले क्षेत्रों में, वर्षा जल के समुचित उपयोग के लिये पौधों की कतारों के बीच वाले क्षेत्र से पौधों की तरफ (5 प्रतिशत) ढलान बनाने से वर्षा जल को पौधों के पास एकत्र किया जा सकता है। काली पालीथीन की पलवार बिछाने से मृदा नमी को संरक्षित करने में मदद मिलती है तथा पौध वृद्धि एवं फल उपज में सुधार होता है। कुछ रसायनों जैसे पावर आयल (1.5 प्रतिशत) और केओलीन (7.5 प्रतिशत) के पर्णीय छिड़काव द्वारा वाष्पोत्सर्जन से होने वाले नमी के ह्रास को रोका जा सकता है।

## खाद एवं उर्वरक

अच्छी वृद्धि एवं उत्पादन के लिये पौधों को उचित मात्रा में खाद एवं उर्वरक देना आवश्यक होता है। पोषक तत्वों की मात्रा क्षेत्र विशेष की मृदा की उवर्रकता पर निर्भर करती है। राजस्थान की बलुई मिट्टी में सामान्यतः पोषक तत्वों की कमी पायी जाती है अतः बेर के अच्छे उत्पादन के लिए पौध रोपण के बाद प्रथम वर्ष में 10–15 किग्रा सड़ी हुई गोबर की खाद एवं 100 ग्राम नत्रजन, 50 ग्राम फॉस्फोरस तथा 50 ग्राम पोटाश प्रत्येक पौधे को देना चाहिए। बेर में खाद एवं रासायनिक उर्वरकों का प्रत्येक वर्ष प्रयोग करके फल उत्पादन एवं गुणवता में सुधार लाया जा सकता है। खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग वर्षा ऋतु में करना उपयुक्त होता है परन्तु नत्रजन को दो भागों में बांटकर पौध वृद्धि एवं फलन दोनों अवस्था में देना उचित होता है। खाद एवं उवर्रकों की सही मात्रा का निर्धारण मिट्टी के परीक्षण के पश्चात् ही करना ठीक रहता है। दूसरे वर्ष से खाद एवं उर्वरक की उपर्युक्त मात्रा को प्रति वर्ष बढ़ाकर देना चाहिए जिससे पांचवे वर्ष में प्रत्येक पौधे को 50–75 किग्रा. गोबर की सड़ी हुई खाद, 500 ग्राम नत्रजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस एवं 250 ग्राम पोटाश

की मात्रा मिल सके। कभी कभी गौण तत्वों की कमी के कारण पौध वृद्धि प्रभावित होती है और अपरिपक्व फलों के गिरने की समस्या भी देखी गई है अतः इनकी पूर्ति के लिये आवश्यक गौण तत्वों का पर्णीय छिड़काव किया जाना चाहिए। यूरिया के 1–2 प्रतिशत घोल के पर्णीय छिड़काव से बेर के फल उपज में वृद्धि तथा गुणवत्ता में सुधार देखा गया है।

## अन्तः सस्यन (इण्टरक्रापिंग)

पौध रोपण के पश्चात् प्रारम्भिक तीन–चार वर्षों तक पौधों की कतारों के बीच बहुत सी भूमि खाली रहती है अतः इस खाली जगह से अतिरिक्त लाभ प्राप्त करने, मृदा उर्वरता को बनाये रखने एवं मृदा कटाव को रोकने हेतु अन्तः सस्यन करना चाहिए। कम पानी चाहने, जल्दी पककर तैयार होने एवं उथली जड़ों वाली दलहनी फसलों जैसे मूंग, मोंठ, चवला, ग्वार आदि को उगाने से मृदा कटाव में कमी होती है तथा भूमि की उर्वरता, भौतिक दशा एवं जल धारण क्षमता में सुधार होता है। अन्तः सस्यन करने से बेर के पौधों की भी अच्छी देखरेख हो जाती है साथ ही साथ किसान को अतिरिक्त आय भी मिल जाती है। सिंचाई सुविधा उपलब्ध होने पर कुछ सब्जियां जैसे मिर्च, टमाटर, मटर, गोभी, मूली आदि भी उगाई जा सकती है। जहां तक सम्भव हो कद्दू वर्गीय सब्जियों को अन्तः सस्यन में नहीं उगाना चाहिए। अधिक सिंचाई आवश्यकता वाली फसलें जैसे प्याज, लहसुन, बरसीम आदि को भी अन्तः सस्यन में नहीं उगाना चाहिए। अधिक पोषक तत्व एवं पानी चाहने वाली अन्न एवं चारा वाली फसलें जैसे गेहूँ, धान, मक्का, बाजरा, ज्वार, आदि फसलों की काश्त भी नहीं की जानी चाहिए। जब पौधे पूर्ण रूप से फलन में आ जायें एवं उनसे व्यवसायिक स्तर का फलन मिलना प्रारम्भ हो जाये तब अन्तः फसलें लेना बन्द कर देना चाहिए क्योंकि उस समय बाग में पौधों के फैलाव के कारण खेती के लिये पर्याप्त भूमि नहीं मिल पाती जिसका प्रभाव फल उत्पादन व गुणवत्ता पर पड़ता है।

## पौधों की कटाई–छंटाई

प्रारम्भ के दो–तीन वर्षो में पौधों का ढांचा मजबूत करने के लिये उनकी काट–छांट करना अत्यंत आवश्यक होता है। बेर के पौधों में झाड़ीनुमा फैलने की प्रवृत्ति होती है अतः उन्हें सधाई (ट्रेनिंग) करके पेड़नुमा बनाया जाता है। ढांचा मजबूत बनाने के लिये यह आवश्यक होता है कि एक ही जगह पर एक से अधिक शाखायें न रखी जायें। एक सीधे बढ़ने वाले मुख्य तने पर भूमि की सतह से 30–40 सेमी. ऊँचाई पर समान दूरी पर एवं चारों दिशाओं में फैलने वाली 3 या 4 शाखाओं

को बढ़ने देना चाहिए। पैबन्द लगे स्थान के नीचे मूलवृंत वाले हिस्से से तथा अन्य अवांछनीय स्थान से निकलने वाली टहनियों को समय–समय पर काटते रहना चाहिए। पौधों की काट–छांट अप्रैल–मई में की जानी चाहिए। दूसरे वर्ष इन मुख्य शाखाओं पर 3–4 द्वितीय शाखाओं को छोड़कर कटाई–छंटाई करते हैं जिनसे तृतीय शाखाएं निकलती हैं। काट–छांट करते समय ऊपर की ओर सीधे बढ़ने वाली शाखाओं को छोड़ देते हैं जिससे मजबूत ढांचे एवं फैलाव का पेड़ बन जाता है।

बेर के पौधों में नई निकलने वाली टहनियों पर फूल आते हैं, अतः इसमें हर साल कटाइ–छंटाई (प्रूनिंग) करना आवश्यक होता है। यदि पौधों की नियमित कटाई–छंटाई न की जाय तो फलों का आकार छोटा एवं गुणवत्ता खराब हो जाती है। प्रूनिंग द्वारा कमजोर, अवांछनीय, रोगग्रस्त, टूटी हुई व एक स्थान पर निकलने वाली कई शाखाओं को काट कर अलग किया जाता है जिससे अच्छी फलन के लिये उचित पौध वृद्धि हो सके। बेर में कटाई–छंटाई अधिकतर शुष्क एवं गर्म मौसम में की जाती है जब पौधों की अधिकांश पत्तियां झड़ चुकी हों और पेड़ सुषुप्तावस्था में हों। शुष्क क्षेत्र में कटाई–छंटाई का उपयुक्त समय मई (वैशाख–ज्येष्ठ) का महीना होता है। कटाई–छंटाई करते समय सामान्यतः पिछले वर्ष की शाखाओं का 50 प्रतिशत भाग काट देते हैं। तृतीय शाखाओं को पूर्ण रूप से एवं द्वितीय शाखाओं की 15–20 कलियां काट देने पर मजबूत एवं ओजस्वी शाखाएं निकलती हैं। बीमारियों के प्रकोप से बचाव के लिये शाखाओं के कटे हुए स्थानों पर फफूंदनाशी (ब्लू कापर या ब्लाइटाक्स–50) का लेप कर देना चाहिए। काट–छांट के लिये तेजधार वाले औजार का प्रयोग करना चाहिए जिससे शाखा क्षतिग्रस्त न हो।

## विपरीत परिस्थितियों से पौधों का बचाव

बेर के पौधों को शून्य से नीचे तापमान जाने या पाला पड़ने पर नुकसान होता है। यहां तक कि नये पैबन्द चढ़े फुटाव वाली कोमल शाखाओं एवं नये पौधों को भी पाले से अधिक हानि होती है। पाले के प्रभाव से पत्तियां मुरझा जाती हैं तथा छोटे फल सूख कर गिर जाते हैं। पाले से बचाव हेतु बाग में रात को धुंआ, पौधों में हल्की सिंचाई एवं 1 प्रतिशत गंधक के अम्ल का पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। ऐसा पाया गया है कि एक वर्ष के पौधों में कलिकायन वाले स्थान पर यदि सूतली की सहायता से टाट या जूट के बोरे का टुकड़ा लपेट दें तो तीव्र पाले की दशा में कली को नष्ट होने से बचाया जा सकता है।

बाग के चारों तरफ विशेषकर उत्तर एवं पश्चिम दिशा में वायुरोधक पौधे

लगाये जाने चाहिए जिससे बाग को ठंडी बर्फीली हवाओं अथवा तेज गर्म लू से बचाया जा सके। जंगली जानवरों से बचाव के लिए कंटीली बाड़ लगाना लाभदायक होता है। बाग के चारों तरफ आधा मीटर दूरी पर स्टैगर्ड तरीके से बोरड़ी के बीजू पौधे लगाकर एक सघन बाड़ तैयार की जा सकती है।

## कीट एवं रोग नियन्त्रण

बेर में कीड़ें एवं रोग लगने से फल उत्पादन पर प्रतिकूल असर पड़ता है, अतः समय पर इनका नियन्त्रण करना अति आवश्यक होता है। बेर में फलमक्खी, फलछेदक, चेफर बीटिल, माइट, दीमक आदि कीड़ों तथा चूर्णिल आसित (छाछिया), काला धब्बा, फल सड़न आदि रोगों से भारी नुकसान होता है परन्तु फलों को सबसे अधिक नुकसान फलमक्खी कीट एवं छाछिया रोग के प्रकोप से होता है। इसके अतिरिक्त बेर के फलों को पक्षियों द्वारा भी नुकसान पहुँचाया जाता है।

**कुछ प्रमुख कीट व रोगों के लक्षण एवं उपाय निम्नलिखित हैं**

**फलमक्खी :** यह एक ऐसा कीट है जिसका प्रकोप बेर में फूल आने व फल बनने की अवस्था में होता है लेकिन इसका प्रभाव फलों के बड़े होने तथा पकने की अवस्था पर दिखाई पड़ता है। इसके प्रकोप से फल का आकार विकृत हो जाता है तथा फलों को काटने पर गहरे भूरे रंग का गूदा दिखाई पड़ता है जिसमें कीट का लारवा (लट) स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। फलमक्खी से बचाव के लिये जिस समय पेड़ों में अधिकांशतः (75 प्रतिशत) फूल आ गये हों और फल बनने शुरू हो गये हों, उस समय मोनोक्रोटोफास नामक कीटनाशक दवा का 0.03 प्रतिशत घोल का पहला छिड़काव करना चाहिए। इसके पश्चात 10–15 दिन के अन्तराल पर 0.05 प्रतिशत फेनथियान का दूसरा छिड़काव तथा इतने ही समयान्तराल पर 0.1 प्रतिशत कार्बेरिल का तीसरा छिड़काव करके फलमक्खी से होने वाले नुकसान को बचाया जा सकता है। इसी दवा के प्रयोग से फलछेदक कीट को भी नियंत्रित किया जा सकता है। जमीन पर गिरे हुए कीट ग्रसित फलों को एकत्रित करके नष्ट करने एवं पौधों के नीचे गर्मी के मौसम में गहरी गुड़ाई करके छोड़ने से कीट के प्रकोप को कम किया जा सकता है।

**दीमक :** शुष्क क्षेत्र की बलुई मिट्टी में नव रोपित पौधों में दीमक (उदई) का प्रकोप अधिक होता है। यह कीट पौधों के तनों के ऊपरी एवं ऊतकीय भाग को खाकर उन्हें कमजोर व खोखला बना देते हैं जिससे पौधे अल्प अवस्था में ही सूख जाते हैं। इसके रोकथाम के लिए गड्ढों के भरावन मिश्रण में 50 ग्राम मिथाइल पैराथियान

धूल मिलाना चाहिए तथा सिंचाई करते समय प्रत्येक पौधे में 5–7 बूंद क्लोरोपायरीफास दवा डालना चाहिए। चूना और क्लोरोपायरीफास के मिश्रित गाढ़े घोल का पौधों के मुख्य तनों पर लेप करने से दीमक के कुप्रभाव को रोका जा सकता है।

**माइट :** यह एक हानिकारक कीट है जिसके प्रकोप से कोमल पत्तियां और फूल सूख कर गिर जाते हैं। हल्के गुलाबी या सफेद रंग के ये छोटे–छोटे कीट पत्तियों की शिराओं एवं फूलों के डन्ठलों से रस चूस कर उन्हें सुखा देते हैं। लक्षण दिखाई देते ही इसके नियन्त्रण के लिए किसी भी माइटीसाइड के 0.03 प्रतिशत घोल के 15–20 दिनों के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करने चाहिए।

**छाछिया रोग :** पाउडरी मिल्डयू या छाछिया रोग लगने पर पौधों की टहनियों, पत्तियों व फलों पर सफेद चूर्ण (पाउडर) जैसा फफूंद दिखाई पड़ता है। नम वातावरण में इस रोग का अधिक प्रकोप होता है। इस रोग के लक्षण नजर आने पर 0.1 प्रतिशत केराथेन नामक कवकनाशी (10 मिली. प्रति 10 लीटर पानी में) के घोल का 10–15 दिनों के अन्तराल पर 3–4 बार छिड़काव करना चाहिए। इसी रसायन का एक छिड़काव सितम्बर माह के शुरू में रोग से बचाव के रूप में (प्रोफायलैकटिक) छिड़काव करना लाभप्रद होता है। इसके अतिरिक्त गंधक के चूर्ण (250 ग्रा.प्रति वृक्ष) का भुराव अथवा घुलनशील गंधक के घोल (0.2 प्रतिशत) का 15–20 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करने से भी व्याधि नियंत्रित की जा सकती है।

**अल्टरनेरिया फल सड़न :** यह एक कवकजनित रोग है जिसके प्रकोप से फलों में फलवृन्त के निकट गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। रोग ग्रसित फल शीघ्र ही टूट कर गिर जाते हैं। इसके नियन्त्रण के लिए जिनेव या डायथेन एम–45 नामक कवकनाशी के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव लक्षण दिखाई देते ही करना चाहिए। नीचे गिरे रोग ग्रसित फलों को नष्ट कर देना चाहिए।

## फलों की तोड़ाई एवं उपज

बेर के फल फूल आने के 150–175 दिन के बाद परिपक्व होते हैं। यद्यपि फलों की परिपक्वता उस क्षेत्र की जलवायु एवं किस्मों पर निर्भर करती है फिर भी फलों के रंग बदलने की अवस्था पर (तोड़ाई के 1 सप्ताह पहले) 750 पी.पी.एम. इथेफोन के छिड़काव से उसमें अग्रिम परिपक्वता लायी जा सकती है। पके हुए फलों की तोड़ाई कई बार में की जाती है। सामान्यतः फलों की तोड़ाई प्रातःकाल में करनी चाहिए जिससे फलों को अधिक गर्मी से बचाया जा सके। उत्तर भारत में बेर की तोड़ाई जनवरी से मार्च तक की जाती है जबकि दक्षिण भारत में अक्टूबर–नवम्बर

माह में ही फल पक कर तैयार हो जाते हैं।

प्रजाति एवं बाग प्रबन्ध के अनुसार बेर के एक पूर्ण विकसित पौधे से 40–200 किलोग्राम फल उपज प्राप्त होती है। वर्षा पर आधारित बाग के पांच वर्ष के पेड़ से औसतन 40–50 किग्रा. फल उपज प्राप्त होती है जबकि सिंचित बाग से प्रति पेड़ औसत फल उपज असिंचित पौधों की तुलना में 3–4 गुना (100–200 किग्रा./वृक्ष) अधिक होती है। बेर के पौधों में तीसरे वर्ष फलन प्रारम्भ हो पाता है परन्तु व्यवसायिक फल उपज पांचवे वर्ष से आरम्भ हो जाती है। उचित रखरखाव करने पर बेर के पौधों से 30–40 वर्ष तक सन्तोषजनक फल उत्पादन लिया जा सकता है।

## तोड़ाई उपरान्त फलों का रख-रखाव

तोड़ाई के बाद फलों को किस्म एवं फल आकार के अनुसार छांट लेते हैं। कच्चे या ज्यादा पके, रोगग्रस्त या विकृत तथा चोट लगे या चिड़िया द्वारा खाये फलों को भी छांट देते हैं। शेष फलों को आकार के अनुसार बड़ी–छोटी श्रेणियों में बांट लेते हैं। श्रेणीकरण हाथ से ही किया जाता है। बेर को प्रायः सफेद कपड़े या टाट के बोरों में पैक करके स्थानीय बाजार में बेचने के लिए भेजा जाता है जबकि दूरस्थ बाजार के लिए फलों को छिद्रयुक्त सी.एफ.बी. कार्टन (6 किग्रा. क्षमता) के अथवा कागज लगाकर लकड़ी के बक्सों में पैक किया जाता है। फलों को टोकरियों में भी सतह पर अखबार रखकर पैक कर सकते हैं। इस प्रकार की पैकिंग में फलों को कम क्षति पहुँचती है। बड़े–बड़े शहरों में बिक्री के लिये विभिन्न क्षमता की छिद्रयुक्त आकर्षक थैलियां प्रयुक्त की जाती हैं जबकि स्थानीय बाजारों में तथा द्वितीय श्रेणी के फलों को टाट के बोरों में पैक करके भेजा जाता है। साधारण तापक्रम पर बेर के फलों को लगभग एक सप्ताह तक भण्डारित करके रख सकते हैं। जबकि कम तापक्रम (8 डिग्री सेन्टीग्रेड) पर फलों को लगभग 15 दिन तक भण्डारित किया जा सकता है। फलों की भण्डारण क्षमता को कैल्शियम नाइट्रेट (1.0 प्रतिशत), वाइरोसिल एग्रो (5.0 प्रतिशत) और बेविस्टीन (1.0 प्रतिशत) द्वारा तोड़ाई उपरान्त उपचार से बढ़ाया जा सकता है। बेर के फलों से विभिन्न परिरक्षित पदार्थ भी तैयार किये जा सकते हैं।

## आय-व्यय ब्यौरा

शुष्क क्षेत्र में अन्य फसलों की तुलना में बेर की खेती एक लाभकारी उद्यम है। बेर के एक हेक्टेयर बाग लगाने में लगभ 9125.00 रूपयों का खर्च आता है।

फल के अतिरिक्त बेर के पौधों की प्रत्येक वर्ष कटाई–छंटाई करने से प्राप्त जलाऊ या बाड़ के उपयुक्त लकड़ी से भी थोड़ी बहुत आय हो जाती है। बेर की खेती के आय–व्यय का ब्यौरा निम्नांकित सारणी में दिया गया है।

## बेर की खेती का लेखा-जोखा

| पौधों की आयु (वर्ष) | फल उपज (किग्रा/हे) | आय (रु./हे.) | लकड़ी की उपज (किग्रा/हे.) | आय (रु./हे.) | कुल आय (रु./हे.) | कुल खर्च (रु./हे.) | लाभ (+/–) |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 1 | – | – | – | – | – | 9125 | –9125 |
| 2 | – | – | 150 | 150 | 150 | 5000 | –13975 |
| 3 | 2300 | 11500 | 600 | 600 | 12100 | 10900 | –12775 |
| 4 | 6200 | 31000 | 900 | 900 | 31900 | 15200 | +3925 |
| 5 | 9300 | 46500 | 1500 | 1500 | 48000 | 17000 | +31000 |
| 6 | 12400 | 62000 | 1800 | 1800 | 63800 | 17000 | +46800 |
| 7 वर्ष और आगे | 15600 | 78000 | 2200 | 2200 | 80200 | 17000 | +63200 |

शुष्क क्षेत्र में इस प्रकार सेव जैसे मीठे पौष्टिक बेर फल की खेती करके छठे वर्ष प्रति हेक्टेयर लगभग 50,000–60,000 रूपये की आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

## झरबेरी एवं बोरड़ी के पेड़ों पर उन्नत बेर

शुष्क क्षेत्र में बहुतायत से पाये जाने वाले झरबेरी एवं बोरड़ी के पेड़ों पर उन्नत किस्मों के बेर की पैबन्द चढ़ाकर उनको अधिक फलदायी बनाया जा सकता है। इस कार्य के लिए जंगली पेड़ों को 1–1.5 मीटर की ऊँचाई पर काट देते हैं। इन पेड़ों को 2–3 मुख्य शाखाओं के निचले 30 सेमी. भाग से भी काटा जा सकता है। यह कार्य अप्रैल से जून के मध्य तक करते हैं। कटी हुई शाखाओं से पैबन्द चढ़ाने योग्य कोमल नयी टहनियां एक–डेढ़ माह में तैयार हो जाती है। इन टहनियों पर जून–जुलाई में पैबन्द चढ़ाया जा सकता है। पैबन्द चढ़ाने के लिए उन्नत किस्म की कलिकाओं का प्रयोग किया जाता है जिसे स्थानीय शोध संस्थानों अथवा पंजीकृत पौधशालाओं से प्राप्त किया जा सकता है। इन पेड़ों की कटाई के समय का निर्धारण उन्नत किस्म की कलमों की उपलब्धता के आधार पर करना चाहिए। पैबन्द चढ़ाने के पश्चात् बोरड़ी के मूलवृन्त व अन्य भागों से निकलने वाली अन्य टहनियों को समय–समय पर काटते रहना चाहिए। इस प्रकार, पैबन्ध चढ़ाकर झरबेरी एवं बोरड़ी के जंगली पौधों से उन्नत किस्म के बेर का उत्पादन किया जा सकता है।